International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(4): 243-247

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(4): 243-247
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 21-05-2021
Accepted: 26-06-2021

कुमुद कुमार पाण्डेय
शोधार्थी–संस्कृत
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
कुमुद कुमार पाण्डेय
शोधार्थी–संस्कृत
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

नारदीय पुराणः एक अनुशीलन

कुमुद कुमार पाण्डेय

प्रस्तावना

हिन्दू धर्म का व्यापक प्रचार प्रसार पुराणों के माध्यम से सम्भव हुआ। इसमें हमें वैदिक, अवैदिक तथा जनसाधारण के धार्मिक विश्वासों का समन्वय मिलता है। पुराण अपनी सरल एवं सुन्दर शैली में हिन्दू धर्म की सर्वांगीण स्थिति प्रस्तुत करते है। इस धर्म का उद्देश्य वैदिक धर्म को सरल ढंग से आम जनता के समक्ष प्रस्तुत करना है। शिव, विष्णु आदि वैदिक देवताओं को ग्रहण कर पुराणों ने उन्हें नवीन स्वरूप प्रदान किया है। ब्रह्मा की कल्पना ब्रह्मा के रूप में की गयी तथा ब्रह्मा, विष्णु और महेश को त्रिदेव की संज्ञा दी गयी। ये विश्व के क्रमशः कर्ता, धर्ता और संहारकर्ता थे। विष्णु के विभिन्न अवतारों की कल्पना हुई। परमतत्व ईश्वर को साकार मानते हुए। उन्हें अद्भुद शक्तियों से युक्त माना गया। तथा उनके विभिन्न और रूपों का विधान हुआ। भक्ति का पूर्ण विकास इसी धर्म में ही देखने को मिलता है। इस युग में मूर्ति पूजा का प्रचलन हुआ। देवताओं की पुरुष या नारी के रूप में मानकर पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि के द्वारा उसे पूजा करने का विधान प्रस्तुत किया गया। वैदिक यज्ञों को सरल रूप प्रदान कर पुराणों ने उन्हें सबके लिए सुलभ बना दिया। पुराणों की धारणा है कि ईश्वर की कृपा से ही मुक्ति सम्भव है। अतः पुराणों को पञ्चम् वेद कहा गया है–''इतिहासपुराणं च पञ्चमो वेद उच्यते'

अवैदिक विचारधारा के प्रभाव से पुराणों में अनेक प्रकार की देवियों तथा दुर्गा, काली, चामुण्डा आदि की पूजा का विधान प्रस्तुत किया गया। साथ ही साथ इस धर्म में हमें अनेक प्रकार को ब्रह्मचरों के दर्शन होते है। व्रत, दान, तीर्थ–यात्रा, ब्राह्मणों को भोजन कराना आदि इस समय धार्मिक जीवन के अंग थे। शरीर पर भस्म पोतने तथा तिलक लगाने की प्रथा का प्रचलन भी इसी पुराण से हुआ। पुराण में ऐसी मान्यता थी कि व्रतों के अनुष्ठान द्वारा शरीर तथा आत्मा शुद्ध होती है। जिससे मोक्ष की प्राप्ति होती है। पुराण वर्णाश्रम धर्म के पालन पर विशेष बल देता हैं। इसमें मोक्ष प्राप्ति के लिए ज्ञान के साथ–साथ वर्णाश्रम धर्म का पालन करना भी अनिवार्य बताया गया है। वायु पुराण में वर्णित है कि जो व्यक्ति वर्णाश्रम धर्म का पालन नही करता उसे यम लोक के कष्ट भोगने पड़ते है। पुराण संस्कृत साहित्य के महत्वपूर्ण अंग तथा उपजीव्य है, इनमें भारतीय संस्कृति एवं प्राचीन परम्पराओं का रोचक वर्णन मिलता है पुराण का वास्तविक अर्थ प्राचीन या पुराना है। इसमें प्राचीन कथानक, वंशावली इतिहास, भूगोल, ज्ञान विज्ञान आदि सभी तत्वों का समावेश है अतः इसे पुराण नाम दिया गया। वैदिक साहित्य में पुराण शब्द, इतिहास आख्यान के साथ प्रयुक्त हुआ इतिहास में सत्य घटनाएं वर्णित होती है। पुराण में इतिहास के साथ घटनाएं वर्णित होती है। पुराण में इतिहास के साथ–साथ आख्यान का समावेश रहता है। इतिहास की अपेक्षा पुराण का क्षेत्र विस्तृत होने का यही कारण है। प्राचीन तत्वों के समावेश के भाव के लेकर पुराण शब्द को अनेंक प्रकार से व्याख्यायित किया गया है संसार की उत्पत्ति एवं विकाास का क्रम का बोधक, प्राचीन परम्परा का प्रतिपादक ग्रन्थ विश्व रचना का इतिहास आदि है।

सायणचार्य ने अपने भाष्य में लिखा है कि वेद के अर्न्तगत देवासुर युद्धादि का वर्णन इतिहास कहलाता है। और आगे यह असत् था और कुछ न था। जगत की प्रथम अवस्था से लेकर सृष्टि किया का वर्णन पुराण कहलाता है।

वृहदारण्यक के भाष्य में शंकराचार्य ने भी लिखा है कि उर्वशी पुरुरवा आदि संवाद स्वरूप भाग को इतिहास कहते है और पहले असत् ही था इत्यादि सृष्टि प्रकरण को पुराण कहते है। विष्णु पुराण, ब्रह्मवैवर्त, मत्स्यपुराण, शिव पुराण, वायवीय संहिता के अनुसार सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश मन्वन्तर और वंशानुचरित व पुराणों के पाँच लक्षण प्राप्त होते है।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशों मन्वन्तराणि।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्।।[1]

वृहकल्प प्रसप में देवर्षि नारद जी द्वारा जिन अनेक धर्म आख्यायिकाओं का वर्णन हुआ, वही पच्चीस हजार श्लोक संख्या में ग्रथित ''नारदीय पुराण'' नाम से जाना जाता है। इसे वृहद नारदीय पुराण भी कहते है इसके दो भागों में क्रमशः 125 और 82 अध्याय है। इसके पूर्व भाग में वर्णाश्रम के आचार श्राद्ध, प्रायश्चित, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष आदि का विस्तृत विवेचन है। विष्णु राम हनुमान कृष्ण काली महेश सम्बन्धी मामलों का भी इसमें उल्लेख है। इसमें विष्णु भक्ति को मुक्ति का परम साधन स्वीकार किया गया है। प्रथम भाग में चार पाद है। विष्णु भक्त राजा रूक्माप्द का चरित्र उत्तर भाग में है। उत्तर भाग में एकादशी व्रत यमराज की चिन्ता ब्रह्मा जी द्वारा प्रकट की गयी मोहनी पवित्र तीर्थों का महत्व आदि का विवेचन है।

नारदोक्त पुराणं तु नारदीयं प्रचक्षते'
शिवपुराण

गण्ा की महत्ता :

गण्ा मानवीय पापों को नष्ट कर देती है मृत व्यक्तियों के केश, अस्थि, नख, दन्त अथवा केवल शमशान भस्म से ही गण्ा जल संस्पर्श मात्र मृत प्राणी के लिए विष्णु लोक का साधान हो जाता है। अतएव मृत व्यक्ति के अस्थि आदि का गण्ा में विसर्जन मृत प्राणी के पापों का अत्यन्त शामक होता है। गण्ा जलाभिषेक मात्र से ज्ञाताज्ञात समस्त पाप नष्ट हो जाते है।[2] नारदीय पुराण पूर्वाद्ध के तेइसवे अध्याय में एकादशी व्रत की विधि एवं माहात्म्य का धर्मशास्त्र सम्मत तथ पुराणन्तरामोदित भावगर्भ उपवर्णन है। इस प्रसंग में भी गण्ा की महत्ता का स्मरण है–

नास्ति गण्ासमं तीर्थ नास्ति मातृसमो गुरुः।
नास्ति विष्णु समं दैवं तपो नानशनात् परम।।[3]

महापुण्यवती गण्ा का स्मरण पाप ताप शामक दर्शन ही हरिलोक प्रदायक गण्ाजल पान ही सारूप्य मुक्ति कारक एवं गण्ा स्नान ही परमोत्तम विष्णु लोक प्रदायक है।[4]

नारदीय पुराण के अनुसार, गण्ा के प्रभावातिशय वर्णन सामर्थ्य को देवेन्द्र ब्रह्म विष्णु और शऽर जी भी नहीं धारण करते है क्योंकि गण्ा नाम स्मरण मात्र मानव कृत अगणित पापावमोचक एवं ब्रह्म लोक फल प्रदायक है।[5]

महर्षि कपिल के क्रोध से सगर पुत्रों का विनाश, भगीरथ द्वारा गण्ा जी का अनयन तथा गण्ा जी के स्पर्श से सगर पुत्रों का उद्धार यह कथा नारदीय पुराण पूर्व भाग में विर्णत है। यह लोक प्रसिद्ध कथा गण्ा जी के माहात्म्य का उत्प्रेरण करती है।

प्रमुख तीर्थ एवं महत्त्व :

काशीतीर्थ :

नारदीय पुरण के उत्तर खण्ड में अध्याय 48 से 51 तक 4 अध्यायों में अविमुक्त क्षेत्र काशी पुरी का सर्वाति शामी महत्व प्रतिपादित है। काशी का विस्तार पूर्व से पश्चिम की ओर ढाई योजन (30किमी0) तथा दक्षिण से उत्तर असी से वरूण तक आधा योजन (6किमी0) है।[6] असि शुष्क नदी है वरुण से असी तक वाराणसी का विस्तार है। इसी कारण काशीपुरी का एक नाम वाराणसी है।

एक बार भगवान शिव लोककर्ता ब्रह्मा जी के दर्शन के किए गये दर्शन के पश्चात् वह ब्रह्मा द्वारा किये जाने वाले वेद पाठ को सुनने लगे ब्रह्मा जी चारो मुखों से प्रसन्नता पूर्वक वेदाच्चारण कर रहे थे। ब्रह्म जी के पंच मुख को देखकर रूद्र को ईष्या हुई और उन्होंने अपने नासाग्र से ब्रह्मा का वह आकाशस्थ मुख काट दिया। वह कटा सिर शिव के बायें हाथ से इस प्रकार चिपक गया कि प्रयास करने पर भी नहीं छूटा पितामह दुःखी होकर भगवान शिव को देखने लगे। शिव ने भगवान विष्णु का स्मरण किया सर्वव्यापक विष्णु प्रकट हुए और शिव ने उनको प्रणाम किया भगवान् विष्णु ने कहा शम्भोः चतुरानन का पञ्चम सिर काट डालने का प्रायश्चित आपको भोगना पड़ेगा। ब्रह्म हत्या आपका पीछा कर रही है। अतः बारह वर्ष तक आपको एक स्थान पर नहीं रहना है। बारह वर्ष का तीर्थ प्रवास (तीर्थ भ्रमण) एवं कपाल में भिक्षा ग्रहण द्वारा आपको इस दारूण पाप से मुक्त हो जायेगे। तदन्तर भगवान शिव तीन वर्षों तक भ्रमण करके वदरिकाश्रम पहुंचे वहां भिक्षा देने के लिए समुद्यत नारायण को देखकर शिव ने त्रिशूल से उनके दाहिने हाथ पर प्रहार किया। त्रिशूल से अत होने पर हाथ से विचित्र वर्ण वाली बारह हाथ परिणाम के तीन भयंकर धाराये प्रकट हुई पहली धारा कपाल में दूसरी मुख में गिर गयी तीसरी नदी रूप में परिणित हो गयी शिव को गण्ा धारा प्राप्त हुई जिसका उन्होंने तीन वर्ष तक सेवन किया।

वे वहाँ से कुरूक्षेत्र चले गये कुरूक्षेत्र में खडे होकर वे ब्रह्महृद में गिर गये और उसी में तीन वर्ष तक डूबे रहे अन्तर वे क्षत–विक्षत होकर वहाँ से निकले और भगवान नारायण को प्रणाम कर तीर्थाटन करते हुए काशी क्षेत्र में पहुँच गये जो ब्रह्म हत्या निवारक काशी क्षेत्र में निवास की इच्छा प्रकट की। लक्ष्मी पति ने उसे स्वीकार कर लिया तब से यह शैव क्षेत्र माना जाता है।[7]

इन वर्णनों से ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' और माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः, इस सनातन सिद्धान्त की सम्पुष्टि होती है।

नारदीय पुराण में इसी प्रकार अनेक तीर्थ का महत्म्य दिया गया है। लोलार्क कुण्ड के पास शुष्क नदी, उत्तर में तिमिचण्डेश्वर तथा दक्षिण दिशा में ओंकार तीर्थ वायव्य के सगर द्वार स्थापित चतुर्मुख शिवलिप है। यही से उत्तर पश्चिम भद्रदेह नामक पापनाशी सरोवर है। काशी के पूर्व में अन्तकेश्वर, दक्षिण में सर्वेश्वर उत्तर में मालतीश्वर और पश्चिम में कृत्तिवासंश्वर स्थित है।[8]

गयातीर्थ :

गया के विषय में अनेक पुराणों तथा धर्म शास्त्रों में यह श्लोक प्राप्त है–

एष्टव्या वहवः पुत्राः यद्येकोऽपि गयां ब्रजेत्
यजेत वाश्वमेधेन नीलं वा वृषमृत्सृजेत।।[9]

पितरो ने यह कहा है कि मनुष्यों को बहुत से पुत्रों प्राप्ति की प्राप्ति की इच्छा करनी चाहिए। हो सकता है कि उनमें से कोई एक भी गया जाकर पिण्डदान कर दे।

नारदीय महापुराण के अनुसार प्रेतराज के कथन से किसी वैश्य के प्रेतराजों उद्देश्यक से गया में पिण्डदान किया जिससे उसका और उसके साथ वाले अन्य गोत्रीय लोगों का प्रेत योनि से उद्वार हुआ और वे सभी ब्रह्मलोक गामी हुए।

गया शिरसि यः पिण्डं शमीपत्र प्रमाणतः।
कन्द मूलफलाद्यैर्वा दद्यात् स्वर्गनयेत् पितृन।।[10]

गया में प्रमाण से भी कन्दमूल फल आदि का पिण्डदान पितरों को उत्तम लोक प्रदान करने के समर्थ होता है।

प्रयागतीर्थ :

तीर्थराज प्रयाग का सेवन यज्ञानुष्ठान जन्य पुण्यफल प्रदायक है। त्रिवेणी में मकर सक्रान्ति में मौन होकर स्नान करना चाहिए। स्नान के पश्चात् वासुदेव हरिकृष्ण और माधव का नाम लेना चाहिए।

मकरस्थे रवौ माघे गोविन्दाच्युत माधव।
स्नानेनानेन में देव! यथोक्त फलदोभव।।[11]

हरिद्वार तीर्थ का माहात्म्य श्रीमद्भागवत चतुर्थ–3/3 में विस्तार से दिया गया है।

आश्रम धर्म का स्वरूप :
नारदीय पुराण की दृष्टि से ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास रूप आश्रम चतुष्टय चार व्रत है। जिनसे उत्तम धर्म प्राप्त किया जा सकता है। आश्रम के पालन से व्यक्ति क्रमशः निस्प्रह एवं कर्म योगी शान्तचित होकर ऐहिक, आमुष्मिक अभ्युदय द्वारा निश्रेयस की प्राप्ति करता है।[12]

ब्रह्मचर्याश्रम का स्वरूप :
उपनयन संस्कार में पूर्व ब्रह्मचर्य आश्रम ग्रहण होता है। ब्रह्मचारी विप्र की मौञ्जी मेखला, क्षत्रिय ब्रह्मचारी को धुनष की प्रत्यञ्या और वैश्य ब्रह्मचारी को भेड के ऊन की मेखला प्रशस्त है। त्रैवार्णिक द्विज क्रमशः पलाश, गूलर और विल्व दण्ड धारण करते है। दण्ड परिणाम ब्रह्मण का सिर के केश तक क्षत्रिय का ललाट तक और वैश्य का नासिकाग्र तक होता है।[13]

गृहस्थाश्रम धर्म का स्वरूप :
''अनाश्रमी''[14] न त्रिष्ठेत्'' इस अनुवाक्य के अनुसार इस आश्रम धर्म का कभी उल्ल्घन नहीं करना चाहिए। विद्याध्ययन की पूर्णता के पश्चात् स्नातक होकर व्यक्ति गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है। स्नातक शब्द स्नान किया हुआ इस अर्थ का वाचक है। ज्ञान जल से स्नात छात्र स्नातक कहे जाते है।
स्नातक होने पर गुरुजी सत्यं वंद धर्म चर[15] आदि जो उपदेश देते थे। इस परम्परा का अनुकरण आज विश्वविद्यालयों में दीक्षान्त समारोह में किया जाता है।
गेहे त्रिष्ठति इति गृहस्थः इस व्युत्पत्ति के अनुसार घर में रहने वाले गृहस्थ कहे जाते है। और **न** गृहं गृहमित्याहुः गृहिणी गृहमुच्यते।[16]
इस प्राप्त वचन के अनुसार गृहस्थ के लिए विवाहित होना आवश्यक है।

वानप्रस्थाश्रम धर्म का स्वरूप :
शरीर में वृद्धावस्था के चिन्ह होने पर गार्हस्थ्य का भार पुत्रों को देकर स्त्री सहित अथवा स्त्री को पुत्रों के अधीन वानप्रस्थ आश्रम पालन हेतु गृहत्याग करना पुराण सम्मत है। वानप्रस्थ आश्रम में त्रिकाल स्नान, पञ्ञाकेश धारण, भूमिशयन, ब्रह्मचर्य, पञ्चयज्ञ, स्वाध्याय, नारायण पूजा प्राणीमात्र पर दयाभाव तथा एक समय भोजन एवं तितिक्षा और चन्द्रायण आदि का अनुष्ठान धर्मशास्त्र सम्मत है। समीक्ष्य पुराण में इसका साणेंपाप प्रदर्शन किया गया है।[17]

सन्यासश्रम धर्म का स्वरूप :
नारदीय पुराण के अनुसार संन्यासी वेदान्त का अध्येता, मननशील, शान्त, दान्त जितेन्द्रिय, निरहङ्कार, निर्मम, निर्द्वन्द्व होता है वह दिगम्बर जीर्ण वस्त्र अथवा जीर्णवस्त्र के कौपीन को पहने वाला सर्वदा मुण्डी होता है। वर्षाकाल के चर्तुमास के अतिरिक्त सन्यासी एक स्थान पर एक रात ही रहते है। भिक्षान्त ही उनका भोजन होता है। सन्यासी के लिए लोभ अत्यन्त गर्हित है। लुब्ध सन्यासी को चाण्डाल कहा गया है।[18]

दान की महत्ता :
नारदीय पुराण में दान की महत्ता का प्रतिपादन करने हेतु देशकाल में औचीत्य का विशेष धारण का प्रतिपादन किया है। गण आदि पवित्र नदियों से दान के उचित देश माने गये है। तीर्थ में किया गया दान धन धान्य रत्नादि के रूप में दाता पुनः प्राप्त होता है। धर्म क्षेत्र में गोदान, भूमि दान दाता के लिए पुण्यजनक माना गया है। पुराण में अन्नदान, तिलदान, सुवर्ण दान, वस्त्रदान, कन्यादान, विद्यादान, देवमन्दिर दान आदि के आसाधारण पुण्य फल का विस्तार पूर्वक वर्णन है।[19]

नारदीय पुराण में मन्त्र–जप–नियम :
पुराण में मन्त्रों के चार प्रकार उपलब्ध होते है।

1. सुसिद्ध सिद्ध
2. सुसिद्धसाध्य
3. सुसिद्ध सुसिद्ध
4. सुसिद्धारि

मन्त्र जप हेतु प्रतिदिन मन्त्र के इष्ट देवता की पूजा का देवपञ्चायतन पूजा पद्धति के अनुसार विधान लिखा गया है। मन्त्र जप के अन्तर गुरू स्तवन का विधान है।

> अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चरा चरं।
> तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः[20]

नारदीय पुराण में अनेक प्रकार में देवी देवताओं की उपासना का विधान बताये गये है।[21]

भगवान शिव की उपासना :
परमात्मा के दो स्वरूप वेद प्रतिपादि करते है। प्रकृति रहित निर्गुण ब्रह्म तथा प्रकृति सहित सगुण ब्रह्म, सगुण ब्रह्म भी निराकार एवं सकार भेद से द्विविध है। निराकार सगुण ब्रह्म को महेश्वर विष्णु महेश तीनस्वरूप सृष्टि का उत्पत्ति पालन और संहार करते है। यही परमेश्वर शिव के उपासक सदाशिव विष्णु के उपासक महाविष्णु और शक्ति के उपासक महाशक्ति है।

> त्रिधा भिन्नों ↑हं विष्णों ब्रह्मविष्णुहरारव्यया।
> सर्गरक्षालयगुणै र्निष्कलोऽपि सदा हरे।।[22]

जैसे मिट्टी में नाना प्रकार के पात्रों में नाम एवं आकार का ही भेद है। तात्विक दृष्टि से सब मिट्टी ही है। तद्वत शिव विष्णु और ब्रह्म एक रूप ही है। पुराणों में तीनों की प्रमुखता तथा शक्ति की प्रमुखता विषय के अनेक साक्ष्य प्राप्त होते है।

दीक्षा विधान का स्वरूप :
नारदीय पुराण के अनुसार दीक्षा देने वाले आचार्य में नित्य मन्त्र जपानुष्ठान, शान्ति, कुलीनता, जितेन्द्रियता मन्त्र के तात्विक अर्थ का ज्ञान, निग्रह अनुग्रह, मनन, संयम, विद्वत्ता, विनय, आश्रम धर्मपालन ध्यान, हितभाषण, संसय, निवारणशाक्ति तथा नित्य सत्कर्मानुष्ठान को आवश्यक गुण बताया गया है। इसी प्रकार आदर्श शिष्य में शान्ति, विनय शुद्धता शमदम श्रद्धा स्थिरता, शारीरिक शुद्धि, धार्मिकता, चित्त शुद्धि, आचारशुद्धि, कृतज्ञता, सुदृढता, व्रतानुष्ठान, पाप कर्मों से भय तथा गुरु सेवा आवश्यक गुण बताये गये है।[23]

एकादशी सम्बन्धी नारदीय पुराण विधि :
नरदीय पुराण के अनुसार एकादशी व्रत चार समय का अन्न त्याग देना चाहिए दशमी की रात्रि एकादशी का दिन और रात्रि तथा द्वादशी का दिन भोजन के लिए वर्जनीय है दशमी के दिन त्याज्य दस वस्तुओं में पुराणकार ने कास्यपात्र, मांस (मांसाहारी हेतु) मसूर, चना, कोदव शक, मधु परान्न, पुनभोजन मैथुन को व्याज्य किया है। एकादशी व्रत में दिन द्यूत, निद्रा, दान, दातून परनिन्दा, चुगली, चोरी, हिंसा मैथुन क्रोध तथा असत्य भाषण व्यायाम, यात्रा पुर्नभोजन मसूर और अस्पृश्य का स्पर्श वर्जित बताया गया है। शक्ति होने पर उपवास विहित है। शक्ति न होने पर एक भुक्त व्रत किया जा सकता है। जिसमें रात्रि भोजन निषिद्ध है।[24]
प्रत्येक एकादशी व्रत में निराहार रहते हुए एकाग्रचित होकर श्रद्धापूर्वक श्री विष्णु भगवान की पूजा तथा जप, होम, पाठ तथा

रात्रि जागरण करने में ऐहिकं आनुष्मिक शुभ फल प्राप्ति होती है। और विष्णु सायुज्य प्राप्त होता है।

नारदीय पुराण के अनुसार वेदा॰ स्वरूप :

वेद का सम्यक अनुशीलन करने वाले उपकरण शास्त्रों को वेदा॰ के नाम से जाना जाता है। आचार्य पाणिनि ने वेद पुरुष के छः अंगों की कल्पना का सोगोपांग वर्णन करते हुए वेदाध्ययन द्वारा ब्रह्मलोक की प्राप्ति को सम्भव माना है। वेदा॰ शब्द की निष्पत्ति वेद और अंग दो शब्दों से हुई है। अंग शब्द का अर्थ है–उपकारक। इस प्रकार जो वेद के उपकारक है वे वेदा॰ वेदों के अर्थज्ञान तथा शुद्ध उच्चारण में सहायक होते है। इसकी सहायता से ही वेद के स्वरूप का सम्यक ज्ञान होता है। वेद के यथार्थ ज्ञान तथा उनके शुद्धोच्चारण के लिए वेदाणें का ज्ञान नितान्त उपयोगी है। ये अंग छः है।

1. शिक्षा (घ्राण)
2. कल्प (हाथ)
3. व्याकरण (मुख)
4. छन्द (पाद या चरण)
5. निरुक्त (कान)
6. ज्योतिष (नेत्र)

शिक्षाशास्त्र का नारदीय पुराण सम्मत स्वरूप :

आचार्य रामायण ने अपनी ऋग्वेद भाष्य भूमिका में शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहा है कि–"वर्ण स्वराद्युच्चारण प्रकारों यत्रोपदिश्यते सा शिक्षा''

अर्थात वह वेदा॰ जिसमें वर्ण, स्वर आदि के उच्चारण की विधि का सम्यक वर्णन किया जाये, शिक्षा है।

वेदा॰ साहित्य में स्वर–वर्णादि उच्चारण प्रकार को बताने वाले शास्त्र को शिक्षा गद्य गया है। तैत्तिरीय उपनिषद् में शिक्षा के छः अंगवतलाये गये है।

1. वर्ण
2. स्वर
3. मात्रा
4. वल
5. साम
6. सन्तान।

यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक शिक्षा ग्रन्थ में इसके सभी अ॰ विद्यमान हो क्योंकि कुछ ऐसे शिक्षा ग्रन्थ है जिसमें सभी अ॰ विद्यमान नही है। जैसे कात्यायन शिक्षा में केवल स्वर, कालनिर्णय शिक्षा में केवल मात्रा का विवेचन किया गया है। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे शिक्षा ग्रन्थ है जिसमें किसी भी विषय का वर्णन नहीं किया गया है।

नारदीय पुराण के अनुसार स्वर भेद एक अपराध है। जो यजमान का अनिष्टकारी है। वाड्मय के उच्चारण वक्षस्थल शिर और कण्ठ से होता है। ये तीनों सवन है। स्थान में नीचे स्वर से हुआ शब्दोच्चारण प्रातः सवन, कण्ठ स्थान में मध्यम स्वर का शब्दोंच्चारण माध्यन्दिन सवन और मस्तक में उच्चारण से शब्दोच्चारण तृतीय सवन है। समागत विद्वान प्रथम षड्ज स्वर द्वितीय ऋषभ तृतीय गान्धार चतुर्थ मध्यम पंचम मन्द्र षष्ठ धैवत सप्तम निषद स्वरों का प्रयोग करते है। मोर षड्जस्वर में, गोयं ऋषम स्वर भेड़ बकरियां गान्धर्व स्वर में, क्रौच मध्यम स्वर में कोयल पंचम स्वर में घोड़ा धैवत स्वर में और हाथी निषाद स्वर में बोलते है।

पुराण कार ने अष्टाध्यायी के– तस्यातिः उदात्तमर्धस्वम्।[25] के नियमानुसार स्वरित स्वर में उदात्त अनुदात्त की माला का अवधारण किया है। पलक मारने के समय को मात्रा कहते है। पुराणकार ने अनुनासिक का उच्चारण काठ के वाद्य के ध्वनि के तुल्य माना है। प्रातः जागरण दन्तधावन स्नान लवण युक्त लिफला चूर्ण भक्षण अपवित्र वस्तु का त्याग कुतीर्थ अर्थात् असत् अध्यापन का त्याग उच्चारण में शीघ्रता का त्याग करते हुए विधोपार्जन हेतु विषयाशक्ति से दूर रहने का उपदेश किया गया है। जैसे खन्ती से धरती खोदने वाला पानी आवश्य प्राप्त कर लेता है। उसी प्रकार सच्चे गुरु की सेवा करने वाला छात्र विद्या आवश्य प्राप्त करता है।[26]

नारदीय पुराण सम्मत कल्प स्वरूप :

कल्प शब्द का अर्थ है– न्याय, नियम, विधि, कर्म और आदेशादि। भारतीय साहित्य के उत्तर वैदिक काल में रचित् सूत्र साहित्य को कल्प वेदा॰ के नाम से जाना जाता है।

सूत्र के विषय में कहा गया है कि–

अल्पाक्षरमसंदिग्धं सारवद् विश्वतोमुखम्
अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः।।[27]

विषय की प्रधानता की दृष्टि से इसे चार भागों में विभाजित किया गया है।

1. श्रौतसूत्र
2. गृहसूत्र
3. धर्मसूत्र
4. शुल्वसूत्र

नारदीय पुराण के अनुसार नक्षत्र, वेद, संहिता, अग्निरस और शान्ति कल्प नाम से पाँच कल्पों का वर्णन है। गृह कल्प देवपूजात्मक कर्म काण्ड विषय से सम्बन्धित है और पितृकल्प पितरों के उद्देश्य से श्राद्ध प्रक्रिया के वर्णन का उपास्थापन है।

गृहकल्प :

भगवान रूद्र एवं ब्रह्मा ने कर्मों में विध्न डालने का कार्य गणेश जी को सौपा है। अतः कार्यालय में विध्नेश गणेश की पूजा आवश्यक है। यज्ञारम्भ में पीसी पीली सरसों का उबटन नागेश्वर आदि औषधियों का लेपन कर सप्तमृत्तिका का युक्त जल से चार कलशों द्वारा स्नान मंत्रों द्वारा अभिषेक, शिव, पार्वती विनायक और ग्रहों भी पूजा करके मातृ का पूजन करने के वाद हवनादि कार्य करना चाहिए। मातृ का पूजन में बिना गृहपूजन निष्फल बताया गया है। नवग्रहों के पूजा पदार्थ वैदिक मंत्र समिधामें गृहोद्देश्यक ब्राह्मण भोजन सामग्री देय द्रव्य सामग्री तथा समस्त पूजन के लिए आवाहन आदि षोड्शोपचार विधि निर्दिष्ट है।[28]

पितृकल्प :

पितृकार्य में विषम संख्यक ब्रह्मण संख्यक ब्राह्मण को भोजन कराया जाता है। नन्दीश्राद्ध में दही और वेर मिले हुए अन्य के पिण्ड का विधान किया गया है।[29]

नारदीय पुराण सम्मत व्याकरण स्वरूप :

पाणिनीय शिक्षा में व्याकरण को वेदपुरुष का मुख स्वीकार किया गया है।[30]

वेदा॰ के रूप में व्याकरण शास्त्र का परिचायात्मक उल्लेख किया गया है। कारक, सुप्ति, विभक्ति सन्धि, षड्लिंग तद्वित तिड़न्त प्रकरण, णिजन्त षड़लुगत भावकर्म फल व्यापार धात्वर्थ और समास का संक्षिप्त परिचय उपस्थापित करते हुए व्याकरण का उपवर्णन नारदीय महापुराण में प्राप्त है। इसमें सुबन्त और तिडन्त को पद और प्रषमादि सात विभक्ति या स्वीकार की गयी है। विभक्ति के प्रयोग को निरुक्ति पाणिनीय व्याकरण शास्त्र सम्मत ही प्राप्त होता है। तिडन्त परस्मैपद विभक्तियां तिप् तस् आदि अष्टाध्यायी के समान ही है। आत्मेन पद विभक्तियों में अन्तर किया गया है।

वे आतेऽन्ते प्रथमो मध्यः से आथेध्वेः तथोत्तमः।
एवहे मह आदेशा शेख↑न्ये लिण्दिषु।।

एकार्थ निरुपण पाणिनीय सम्मत ही है। संक्षिप्त सन्धि निरूपण में दीर्घ पररूप, गुण बुद्धि यण आदि प्रकृति भाव तथा व्यंजन सन्धि में जस्त्व, श्चुत्व छत्व ष्टुत्व डमुदागम तथा किसी सन्धि विसर्ग में स्थान पर रूत्व जिहवामूलीय उपध्मानीय रूत्व के उदाहरणों का संक्षिप्त निरूप है।
उणादि प्रत्यय का उदाहरण है–

हिम+एलूः हिमेलुः, बल+अल त्र बालूलः।
नारदीय पुराण सम्मत छन्द स्वरूप :

ग्रन्थ के सत्तान्वे अध्याय में छन्दः शास्त्र का संक्षिप्त परिचय प्रदान किया है। छन्द को वेद पुरुष का का पैर माना गया है। छन्दः पादौं तु वेदस्य। वेदमन्त्रों का उच्चारण छन्दों के ही अधीन होता है। महर्षि कत्यायन ने सर्वानुक्रमणी में गायत्री उष्णिक अनुष्टुप, वृहती, पक्ति, तिष्टुप और जगती इन सात छन्दों का उल्लेख किया है। पुराण के अनुसार छन्द शास्त्र में छः प्रकार के प्रत्यय है। प्रस्तार, नष्ट, उदिष्ट, एक द्वयादि, लण्क्रिया संख्यान और भवध्योग।

नारदीय पुराण सम्मत निरुक्त निरूपण :
निरुक्त को वेद पुरुष का श्रोत कहा जाता है। इसके रचना कार का नाम यास्क है। सनन्दन देवर्षि, सम्वाद द्वारा नारदीय पुराण के पूर्व भाग द्वितीय पाद तिरपन अध्याय में समास शैली प्रा≺जल रूप से निरुक्त शास्त्र का उपस्थापन सारगर्भ भाषा में अनुस्यूत है। निरुक्त वेद पुरुष का कर्ण है। वैदिक धातु रूप निरुक्त पाँच प्रकार का बताया गया है। इसमें वर्णों का आगम, विपर्यय विकार और विनाश के द्वारा धातु के साथ विशेष अर्थ का प्रकाशन होता है। वर्णागम से हसः वर्णविपर्यय से सिहः विकास से गूढोत्मं वर्णनाश से पृषोदरः एवं विशेष योग से भ्रमरः जैसे प्रयोग सिद्ध होते है।
आचार्य यास्क ने तो निरुक्त को व्याकरण का पूरक माना है। वे निरुक्त के वर्ण विषय का विवेचन करते हुए कहते है कि–

वर्णागमों वर्णाविपर्ययश्च द्वौ चापरौ वर्णविकार नशौ।
धातोस्तद् थार्तिशयेन योगस्त दुच्यते प≺चविधं निरुक्तम्।।

नरदीपुराण सम्मत ज्यौतिष स्वरूपः
ज्योतिष शब्द ग्रहों नक्षत्रों और राशियों का वाचक है। ज्योतिष से सम्बन्धि शास्त्र को ज्योतिष शास्त्र कहा गया है। ज्योतिषः इदं ज्योतिषम। ज्योतिष से सम्बन्धित होने के कारण इसे वेद पुरुष का नेत्र माना गया है। भारती संस्कृति और ज्योतिष शास्त्र का अपहरिहार्य शास्वत सम्बन्ध है। अतः जैसे यह शास्त्र वेद पुरुष का नेत्र है उसी प्रकार संस्कृति का भी यह नेत्र स्थानीय है। ज्योतिष विहीन भारतीय संस्कृति में अन्धत्व दोष आ जायेगा। वह किसी के लिए प्रकाश पुंज नहीं रह जायेगी।
नारदीय पुराण में पूर्वाद्ध भाग द्वितीय पाद 54 से 56 तीन अध्यायों में त्रिस्कन्द ज्योतिष का विशद विवेचन समुपलब्ध है। अतः अन्य मत से ज्योतिष से पाँच स्कन्ध मान्य है। सिद्धान्त, होरा, संहिता, स्वर और सामुद्रिक जब की समीक्ष्य ग्रन्थों में गणित जातक और संहिता तीन स्कन्ध मान्य है। इनमें पांचों का अर्न्तभाव है।[31]

संहिता स्कन्ध
मुख्यतया इसमें ग्रह–संचार काल के पांचों विभाग तिथिक बार नक्षत्र, योग, कारण संस्कारों आदि के मुहूर्त का वर्णन है।
इसी प्रकार इष्ट कालिक सूर्य के भुक्तांश भोग्यांश द्वारा सायनलग्न, उदयलग्न मध्यलग्न एवं दशम लग्न साधन तथा लग्न और स्पष्ट सूर्य के माध्यम से इष्टकाल साधन विधि रोचक प्रदर्शन है।[32] ग्रहण साधन ग्रहण विशोपक फल ग्रहों ने उदयास्त कलांश ग्रहों के प्रतिबिम्ब द्वारा छाया साधन चन्द्र श्रृगोन्नति ज्ञान, गृहयुति में भेद ज्ञान तथा पाताधिकार में पात ज्ञान आदि के साधन की विधियाँ समीक्ष्य ग्रन्थ में उपलब्ध है।[33]

त्रिस्कन्ध ज्योतिष जातक स्कन्ध :
ज्योतिष में जातक अंश का अति विस्तृत सांगोपांग निरूपण समीक्ष्य ग्रन्थ में पूर्वभाग द्वितीय पाद 55 वे अध्याय में प्राप्त होता है। ग्रहों का उच्च नीच परमोच्च परमनीय भाव वर्गोत्तम भाव त्रिकोण आदि भाव राशि स्वरूप वर्ण ग्रहों के शील गुण, वर्ण गृह स्वामी पाप पुण्य ग्रह विभाजन ग्रहों में सात्विक आदि विभाग ग्रहों के वस्त्र धातु ऋतु ग्रह दृष्टि कालमान ग्रहों के रस ग्रहमैत्री ग्रहों का बलाबल वियोनि जन्मज्ञान, पक्षी जन्मज्ञान, वृक्षादि जन्म ज्ञान आधान ज्ञान का विस्तृत वर्णन ग्रन्थ में उपलब्ध है।[34]

उपसंहार, :
इस प्रकार पुराण के कारण ही वैदिक धर्म लोकप्रिय हो सकता है। भारतीय समाज का स्वरूप नारदीय पुराण में प्राप्त होता है। तीर्थों का विस्तृत भौगोलिक आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त होता है। नारदीय पुराण द्वारा भारतीय जीवने में आदर्श की संस्कृति व्याख्या की गयी है। तालाब, कूप, बगीचा आदि की प्रतिष्ठा, व्रत विधान, दानधर्म, प्रयागादि तीर्थों का पुण्य, नदी पुण्य क्षेत्र के माहात्म्य का प्रकाशन करने में वेदा॰ के स्वरूप का ज्ञान कराने नारदीय पुराण की सूक्ष्मोक्षिका पूर्ण मौलिक दृष्टि से श्रयोविधाक प्रकाशन का प्रयास प्रस्तुत शोध पत्र में पदे–पदे द्रष्टव्य है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. विष्णु पुराण 3/5/24, ब्रह्मैवर्तपुराण 133/5
2. मत्स्य पुराण 53/54, शिवपुराण सहिता 1/41
3. नारदीय पुराण 15/162 से 165 तक
4. नारदीय पुराण पूवार्द्ध 23/30
5. नारदीय पुराण 6/42–55–59 से 68
6. वही 9/45 से 148
7. नारदीय पुराण उत्तर खण्ड 48/8
8. वही 48/60
9. नारदीय पुराण उत्तर खण्ड 49/6
10. नारदीय पुराण उत्तर खण्ड 44/5–6
11. वही 46/49
12. वही 63/13
13. वही 24/33 से 35 तक
14. नारदीय पुराण पूर्वाद्ध 24/15 से 20 तक
15. मनुस्मृति 2 अध्याय
16. तैत्तिरीयोपनिषद् शिक्षा वल्ली
17. नारदीय पुराण पूवार्द्ध 26/4
18. वही 27/83 से 90
19. वही 27/91 से 106
20. नारदीय पुराण उत्तर खण्ड 42/5 से 31 तक
21. नारदीय पुराण पूर्वाद्ध– 65/155
22. वही 65 अध्याय
23. शिवपुराण ज्ञान0 4/41, 44
24. नारदीय पुराण पूर्वाद्ध 64 अध्याय
25. वही 120/86 से 90
26. पाणिनीय शिक्षा 1/2/32
27. नारदीय पुराण पूर्वार्द्ध 50 अध्याय
28. पाणिनीय शिक्षा 41–42
29. नारदीय पुराण 51 अध्याय
30. यह विधि सम्प्रति प्रचलित श्राद्ध प्रक्रिया में प्रचलित नही है।
31. पाणिनीय शिक्षा 42
32. नारदीय पुराण भाग द्वितीय 54/2
33. नारदीय पुराण 1/2/54/145 से 150
34. वही 1/2/54/155 से 160
35. वही 1/2/55/1 से 40